देव-सभा ।

अपने परमपूज्य भारतसा
सपनेमें यह स्वर्ग नहीं ।
देशविरहका क्लेश जिसे है
उसे यहाँ सुखलेश नहीं ॥



रामचरित उपाध्याय ।

देव-सभा ।

पुण्य-पुंज है व्यर्थ हमारा
जन्मभूमि यदि दुखिया है ।
सुखिया जो कर सके उसे, बस
वही कृती है मुखिया है ॥

देव-सभा।



जननी जन्मभूमिकी स्वाधीनताके हेतु
एक स्वर्गीयभारतवासीके
प्रयत्नकी
सुन्दर कविकल्पना।

रचयिता—

रामचरितचिन्तामणि, सूक्तमुक्तावली
देवदूत आदिके कर्ता, सुकवि
पं० रामचरित उपाध्याय।

कार्तिक १९७९ वि०।

मूल्य पाँच आने।



Printed by M. N. Kulkarni at the Karnatak Press,
434, Thakurdwar, Bombay.

Published by Nathuram Premi Proprictor,
Hindi-grantha-Ratnakar, Karyalaya,
Hirabagh, Bombay.



देव-सभा ।



पहली बैठक ।



[१]

वर्षा बीती सुखद शरतके
समय सुमुज्वल हुई मही,
किच बिच कीचड़का अवनी पर
कहीं रहा अब नाम नहीं ।
जगा देव-गण स्वर्गलोकमें
बड़े ठाटसे जुटी सभा,
निहत-प्रभा हो गये असुर सब
देख सुरोंकी प्रबल प्रभा ॥

[२]

विष्णु सभापति हुए सभाके
मंत्री उटकर बना सुरेश,
रजताचल पर ज्यों प्रमथोंके
बीच विराजित हुए महेश ।
तन्द्रारहित सहित सुखके सब
सुरवर हर्ष मनाते थे,
ऊँचे स्वरसे सुयश सुरोंके
प्रमुदित चारण गाते थे ॥

[३]

उसी घड़ी यक भारतीयकी
आत्मा आकर हुई खड़ी,
सविनय बोली तुरत सुरोंकी,
जहाँ जुड़ी थी सभा बड़ी ।
दिव्य देवगण नव्य निवेदन
सुनिए जो मैं करता हूँ,
डरता हूँ तुम रूठ न जाना,
देश-विरहसे मरता हूँ ॥

[४]

नरक-निवास मुझे यदि मिलता
तो मैं मलता हाथ नहीं,
सहता दुःख साथ दुखियोंके
रहता चुप हो सदा वहीं।
पर सुखियोंके साथ यहाँ पर
मुझसे जाता रहा नहीं,
कहा न जाता है मनका दुख
मनमें जाता सहा नहीं॥

[५]

भारतीय मैं हूँ, भारत है
दुखी, सुखी मैं क्यों होऊँ?
सुख-समाजमें समासीन हो
कैसे मैं दुखड़ा रोऊँ?।
पुण्यविशेष शेष है मेरा
होता है निःशेष नहीं,
मिले निदेश देश पर जाऊँ
रुचता है परदेश नहीं॥

[६]

स्वर्गलोक-सम सुखद अन्य क्या
लोक कहीं मिल सकता है ?
कनक-कमल क्या मानससरसे
अलग कहीं खिल सकता है ? ।
तो भी अपने प्रिय भारत सा
सपनेमें यह स्वर्ग नहीं,
देश-विरहका क्लेश जिसे है
उसे यहाँ सुख-लेश नहीं ॥

[७]

भारतके संदेश सुनाते
भारतीय जितने आते,
भर जाते हैं नेत्र सुने पर
पर कर मल कर रह जाते ।
कुछ वश चलता नहीं विवश हो
परवश हूँ, बस कृपा करो,
डरो न अपयशसे यश होगा
देवो ! भारत-ह्रास हरो ॥

[८]

देवो ! दया-उदधि हो, देखो
दया-दृष्टिसे, देर न हो,
स्वर्गलोक यह नयाऽऽलोक-
आलोकित है, अन्धेर न हो।
पाप-क्षमा पापियोंका जब
आप लोग कर सकते हैं,
तो फिर मेरे पुण्य-क्षमा कर
ताप न क्या हर सकते हैं ?॥

[९]

मेरा भारत पराधीन हो
प्रतिदिन गारत होता है,
आरत हो कर तार स्वरसे
दुष्टोंसे दुख रोता है।
पर दुर्बलके दैन्य दुःख पर
दुर्जन दया दिखाते क्यों ?
ठोकर पाये बिना दुष्ट-दल
सीधे पथ पर आते क्यों ? ॥

[१०]

बली छली यदि स्वार्थ-लिप्त हों
  असुर उन्हींको कहते हैं,
सभ्य, सौम्य, सज्जन-सम सब दिन
  बन ठन कर वे रहते हैं।
उनसे बचना बड़ा कठिन है
  भारत है भोला भाला,
भालासे भी भीषण है यदि
  गोरा हो मनका काला॥

[११]

इसी लिए है नम्र निवेदन
  मुझे मिले अब छुटकारा,
दमन–नीतिसे दबा हुआ
  रोता होगा भारत प्यारा।
अपनी आँखों जब देखूँगा
  उसको तब सुख पाऊँगा,
इन्द्रासन भी मुझे मिले यदि
  यहाँ तदपि दुख पाऊँगा॥

[१२]

" सुख-सामान यहाँसे बढ़कर
मिल सकते हैं कहीं नहीं, "
मैं क्यों मानूँ, इन्द्र ! आपके
लिए बात हो यही सही ।
अपनेको जो बुरा कहे बस,
वही नीच है, बुरा वही,
अपने करसे अपने उरमें
मार रहा है छुरा वही ॥

[१३]

देव ! दानवोंके वशमें क्यों
मानव हो कर सुख पावे ?
अमरोंके वश अमर-तुल्य यदि
अमरपुरीमें दुख पावे ।
परवश हो जीनेसे मरना
सबविधि अच्छा कहा गया,
सहकरके अपमान जगतमें
किससे जीवित रहा गया ? ॥

[१४]

पलभर भी परवशमें अब मैं
इन्द्र ! न रहनेवाला हूँ,
सहनेवाला नहीं किसीकी
सच्ची कहनेवाला हूँ।
भारतके कारागृहमें भी
सौख्य-लेश मिल सकता है,
किन्तु यहाँके तुल्य क्लेश क्या
वहाँ क्लेश मिल सकता है ?॥

[१५]

विना हमारे गये वहाँपर
चल सकता है काम नहीं,
नाम न होता धाम-हीनका
जिसमें हो दम-दाम+ नहीं।
पुण्य-पुञ्ज है व्यर्थ हमारा,
जन्मभूमि यदि दुखिया है,
सुखिया जो कर सके उसे बस
वही कृती है मुखिया है॥

+ दम-दाम=दमनशक्तिकी माला।

[१६]

केवल जन्मभूमिके बल पर
सुखसे जन्म बिताया है,
भाया जो कुछ किया अन्तमें
स्वर्गभूमिको पाया है ।
किन्तु वहाँ या यहाँ कहीं भी
कुछ भी आया हाथ नहीं,
जन्मभूमि माका यदि मैंने
दिया दुःखमें साथ नहीं ॥

[१७]

देवो ! जन्मभूमिके पगपर
जाकर बलि हो जाऊँगा,
दुखपर दुःख उठा करके भी
मनमें अति सुख पाऊँगा ।
नर होकर भी नारकीय है
भारतीय वह रहा नहीं,
कहा न जिसने सत्य देशके
लिए विविध दुख सहा नहीं ॥

[१८]

बत्तिस कोटि तनय हों जिसके
वह माता भी दुखी रहे,
खल-दलसे पद-दलित निरन्तर
हो करके अपमान सहे।
क्या न उचित है उन तनयोंको
जननीका उद्धार करें,
डरें न परसे मुरें न परसे
मरें भले ही कष्ट हरें॥

[१९]

विश्व-वन्द्य जो गुरु भारत था
आज बना है दास वही,
जिससे डरते रहे सुराऽसुर
पाता है संत्रास वही।
विविध भोज्य जो त्रिभुवन भरको
श्रम करके पहुँचाता है,
देखो! मुट्ठीभर कदन्न भी
उसका पेट न पाता है॥

[२०]

जिसको पाकर नंगे भूखे
  राजराज*-सम आज हुए,
मानवराज हुए दानवसे
  भूतलके सिरताज हुए।
उसी अस्थिचर्मावशेष
  भारतको निगला करते हैं,
बगलाभक्त बने बँगलोंपर
  रहें न अघसे डरते हैं ॥

[२१]

पितृयज्ञ या देवयज्ञ अब
  कैसे भारत किया करे?
पिया करे नित सहन-रक्त तो
  कहिए कैसे जिया करे?।
गौओंका निर्वंश हुआ तो
  आर्योंका निर्वंश हुआ,
ध्वंस हुआ यदि कृषि-कलाप तो
  धर्म कर्म भी ध्वंस हुआ ॥

* राजराज=कुबेर ।

[२२]

छत्तिस सेर एक रुपयेका
भारतमें घी मिलता था !
इस कारण वह वीर रहा
उसके भय भूतल हिलता था।
छः छटाँक अब रूपयेका घी
भगवन्! बिकता हाय नहीं,
क्या वह खाय करे कैसे मख
कहते बनता हाय नहीं ॥

[२३]

तीन चार मन चावल गेहूँ
रुपयेके थे बिके जहाँ,
अब रुपयेके तीन सेर वे
ज्यों त्यों हैं बिक रहे वहाँ।
कर पर कर चन्दे पर चन्दा
तो भी भारत देता है,
तनिक न लगती लाज उसे जो
गला दबाकर लेता है ॥

[२४]

रायबहादुर हाय बना है
ऋणिया भारत हो करके,
शोक, दासता-रत हो करके
बल विवेक सब खो करके।
कूटनीतिके जाल बिछाकर
खल चलते हैं चाल बड़ी,
पल भर भी कल उसे न मिलता
विकल हुआ है सकल घड़ी॥

[२५]

वेत्र-दण्डकी प्रथा मही पर
कहीं न देखी जाती है,
मनो विवशताके फल केवल
भारत-जनता पाती है।
क्रीतदास भी भारतवासी
प्रभो! बनाये जाते हैं,
भेजे जाते द्वीपान्तरको
जहाँ विविध दुख पाते हैं॥

[२६]

गोरे कालेमें अन्तर भी
प्रभो ! निरन्तर रहना है,
रहता है निःशंक दस्यु-दल,
दुःख आर्यगण सहता है।
कालेको यदि गोरा मारे
दण्ड मिलेगा उसे नहीं,
यह अनीतिकी रीति जगतमें
खल सकती है किसे नहीं ? ॥

[२७]

जिस उद्यमको करके काला
आठ रुपैया पाता है,
उसी कार्यको करके गोरा
साठ रुपैया पाता है।
यदि इसको हम न्याय कहें तो
फिर किसको अन्याय कहें,
सहे कहाँ तक देवो ! भारत
दीन दुखी क्यों मौन रहे ? ॥

[२८]

देवो ! देखो अब भारतकी
जीभ न हिलने पाती है,
चलने पाती नहीं लेखनी
सुनकर फटती छाती है ।
भेड़ बकरियोंसे भी गिरकर
भारत-जनता रहती है,
कहती है कुछ नहीं किसीसे
मन ही मन दुख सहती है ॥

[२९]

जहाँ कपटकी लपट नहीं थी
वहीं दपट है दुष्टोंकी,
रपट रात दिन वहीं लगी है
पुष्टोंकी हरमुष्टोंकी ।
सीधे सादे सदा सत्य-रत
साधु सताये जाते हैं,
कलसे छलसे बलसे प्रतिपल
निबल दबाये जाते हैं ॥

[३०]

अस्त्रहीनपर वस्त्रहीन पर
बल सशस्त्र दिखलाते हैं,
कलह-कलाकी चाल चलाकी-
से सबको सिखलाते हैं।
पण्डित जनको दण्डित करके
मण्डित दुर्जन होते हैं,
रोते हैं गुरुजन गुरुदुखसे
दुर्मुख सुखसे सोते हैं॥

[३१]

दुराचारका अब भारतमें
रहा न पारावार कहीं,
मार काट है मची वहीं पर
रहा न सद्व्यवहार कहीं।
भारतवासी बने विलासी
फिर उपवासी रहें न क्यों?
क्रूरोंसे जब दूर न रहते
नारकीय-दुख सहें न क्यों?॥

[३२]

जिस भारतके पग पर पड़ने
दुखी हुआ जग जाता था,
शरणागत बन करके उससे
इन्द्र अभय वर पाता था।
हाय उसीका अब कोई भी
सुनता दुख-सन्देश नहीं,
मनो जनोंके मनमें अब है
कृतज्ञताका लेश नहीं॥

[३३]

भारतके सिर भार तापका
पाप-शापसे आया है,
कायापलट हुई उसकी, क्या
प्रबल खलोंकी माया है ?।
वस्तु विदेशी परदेशी जन
उसे मिला कर देते हैं,
मद्य पिला कर जूठ खिला कर
द्रव्य मिला कर लेते हैं॥

[३४]

जिस अशरण-गणने भारतमें
दीन हीन बन शरण लिया,
धिक्, सतीत्व तक सतियोंका
दुर्गतिसे उसने हरण किया।
आज अकारण हिन्द विना रण
मरण-दुःख है झेल रहा,
सरबस खो कर परवश होकर
पड़ा जेलमें खेल रहा॥

[३५]

सच्चोंको हथकड़ी पड़ी है
झूठे कुरसी तोड़ रहे,
मोड़ रहे हैं मातासे मुख,
विमुखोंसे * रति जोड़ रहे।
जहाँ भूपके भृत्य नित्य ही
घूस मूसते रहते हैं,
रहते हैं दुर्जन सुखपूर्वक,
सुजन सदा दुख सहते हैं॥

---

* रति=प्रीति।

[३६]

शोक नहीं था रोग नहीं था
भोग-लग्न थे लोग जहाँ,
हा बेरोकटोक घर घरमें
हुआ रोगका योग वहाँ।
लूट मची है फूट मची है
कूट कटारी चलती है,
शोभाशाली भारतकी भा +
खूब खलोंको खलती है॥

[३७]

हो प्रतीति कैसे भूपतिमें
रही प्रजासे प्रीति नहीं,
ईति भीति हो क्यों न जहाँपर
सत्य नीतिकी रीति नहीं।
भवमें भूला भाग्य भरोसे
भारत भूखों मरता है,
करता दूर नहीं क्रूरोंको
शूरवीर हो डरता है॥

+ भा=कान्ति।

[३८]

पहले परदादे मरते थे
पौत्र वहाँ अब मरते हैं,
मरते मनुज हिन्दमें जितने
दनुज कहाँ कब मरते हैं।
दाम दियेपर जल मिलता है
सेतीका था दूध जहाँ,
पेश करे परदेश जहाँपर
कौन क्लेश हो शेष वहाँ॥

[३९]

नौकरशाही भूप-रूपमें
क्या उत्पात मचाए हैं,
भूप प्रजामें बैर बीजको
बोकर नाच नचाए हैं।
चैन चमनमें प्रजा-शमनको
दमन नीतिसे करती है,
अमन-सभामें गरल-वमनसे
भूप-हृदयको भरती है॥

[४०]

देवो ! दया-द्रवित हो सुनिए
  और अभी बातें मेरी,
रक्षा करिए सेव्य आप हो
  सेवकके नाते मेरी ।
गला घोंटकर हिन्दीका
  इंग्लिश सिखलाई जाती है,
पिघलाई जाती है जनता,
  रति * दिखलाई जाती है ॥

[४१]

चरतीं क्या गायें जब परती
  धरती भरमें रही नहीं,
जीवन भरती हैं मरती हैं
  सुख करती हैं कहीं नहीं ।
तो भी प्रतिदिन उनके ऊपर
  छलसे छूरी चलती है,
जलती है जनता मन ही मन
  रोकरके कर मलती है ॥

* रति=प्रीति ।

[४२]

वस्त्र विना भारत अबलायें
कर सकती हैं स्नान नहीं,
मैल कुचैले चिथड़ेसे तन
ढके हुई हैं काँप रहीं।
बच्चे उनके सूख सूख कर
नंगे भूखे फिरते हैं,
अस्थि मात्र है उनके तनमें
लुड़क लुड़क कर गिरते हैं॥

[४३]

किन्तु वहीं परदेश-नारियाँ
परियोंसी हैं बनी हुई,
ठनी हुई है ईर्ष्या उनमें
वे मदसे हैं सनी हुई।
रक्त पसीना करके खेतिहर
अगणित दुःख उठाते हैं,
किन्तु वहीं परदेशी जन
मन माना मौज उड़ाते हैं॥

[४४]

अन्न उपज करके भारतसे
परदेशोंमें जाते हैं,
खाते हैं उसको मुस्टंडे
पुष्ट हुए इतराते हैं ।
किन्तु पुकार भारतीयोंकी
कोई सुनता कहीं नहीं,
मनो सुजनता गोरी जनता-
के तन मनमें रही नहीं ॥

[४५]

दान यज्ञ फिर करे कहाँसे
प्रिय भारत जब भूखा है ?
फूले फले भला किस विधिसे
स्वयं वृक्ष जब सूखा है ?।
सुरपुरकी भी हानि बड़ी है
भारतहीकी हानि नहीं,
है आश्चर्य आप लोगोंके
मन क्यों होती ग्लानि नहीं ? ॥

[४६]

तैंतिस कोटि अमर घर बैठे
दान मान पाते जिससे,
उदासीन उससे वे रहकर
प्रेम करेंगे फिर किससे ?।
काल पात्रका ध्यान लगा कर
देवो ! शीघ्र सम्हल जाना,
समय चूकने पर कर मल कर
फिर पड़ता है पछताना ॥

[४७]

दिखलाते हैं प्रेम चतुष्पद
भी अपने सुखदातासे,
फिर हम विमुख रहें क्यों कहिए
जन्मभूमि सी मातासे ? ।
सुरो ! चलो हम दोनों मिल कर।
भारतका उद्धार करें,
है संसार सारवत उनको
जो जन पर-उपकार करें ॥

[४८]

प्रजावर्ग यदि नहीं रहे तो
भूप कहाँसे आवेगा ?
पूजक विना पूज्य भी कहिए
कैसे पूजा पावेगा ?
इसी लिए भारतकी रक्षा
करिए मुरिए आप नहीं,
प्रणत जनोंका साथ न देना
इससे गुरुतर पाप नहीं ॥

[४९]

नश्वर नर हो कर न किसीसे
हम मुरते हैं, मरते हैं,
अजर अमर होकर असुरोंसे
सुरो ! आप क्यों डरते हैं ?।
देवासुर-संग्राम विश्वमें
किससे है विज्ञात नहीं,
जो करते आए हैं करिए
करिए नूतन बात नहीं ॥

[५०]

क्या इतनी भारतकी दुर्गति
  सुनकर आई दया नहीं?
आई दया नहीं यदि, तो क्या
  कुछ भी आई हया नहीं?।
यदि सन्तोष नहीं है सुनकर
  सुनिए फिर भी कहते हैं,
रहते हैं कैसे वे जीवित
  जो खलसे बल सहते हैं॥

[५१]

अबलाओंको बल दिखला कर
  हाय खलोंने नग्न किया,
भूपर उन्हें रँगाकर भारत
  भरके उरको भग्न किया।
मार न सहकर गर्भवती
  बालाओंने निज प्राण दिया,
किन्तु सतीपनसे न टलीं वे
  अपना धर्म-प्रमाण दिया॥

[५२]

जीवित बाला * ज्वलित दहनमें
 गई जलाई हाय जहाँ,
वहाँ पापकी रही न सीमा
 रहा न्यायका नाम कहाँ।
इस कुकर्मके करनेवाले
 हो सकते हैं मनुज नहीं,
कभी सुजनता दिखला सकते
 कहीं दनुजके तनुज नहीं॥

[५३]

कितने बालक बेतोंसे भी
 देवो! पीटे जाते हैं,
हो अचेत जब गिर जाते तब
 खूब घसीटे जाते हैं।

---

* सन् १८५७ में गदरके समय धुन्धुपन्त नाना साहबकी एक मात्र युवती कन्या निरपराध आगरेके किलेमें जीती ही जला दी गई।

फिर सचेत उनको करके धिक्
बेंत लगाये जाते हैं,
क्या गोरे तन गोरे मनके
नहीं बनाये जाते हैं ? ॥

[५४]

पानीके कल रोक रोक कर
दया हटायी जाती है,
प्यासी प्रजा मारकर आसुर
नीति दिखायी जाती है ।
इतनेपर भी भारतीय यदि
अपने दुखड़े रोते हैं,
तो फिर चोर डाकुओंसे भी
बढ़कर दण्डित होते हैं ॥

[५५]

देवो ! जिस भारतमें पहले
रहा एक भी दुखी नहीं,
आज वहींपर एक जीव भी
मिल सकता है सुखी नहीं ।

मनुजों ही तक तथा नहीं है
    अति विस्तृत है कष्ट-कथा,
यथा दमनकी प्रथा चली है
    भारत भरके लिए वृथा ॥

[५६]

भारतके जंगल भी ज्यों ज्यों
    जड़से कटते जाते हैं,
वन्य जन्तु भी वैसे वैसे
    प्रतिदिन घटते जाते हैं।
जलचर थलचर कीट पतंगे
    तक भी दुःख उठाते हैं,
सुख सपना हो गया सभीका
    कल न एक पल पाते हैं ॥

[५७]

भारतका व्यापारी-गण भी
    बहुत दबाया जाता है,
नया नया उस पर प्रतिवत्सर
    टिकस लगाया जाता है।

नाकों दम है यदपि हमारा
लेने पाते साँस नहीं,
पर निराश हम होकर अपना
कर सकते उपहास नहीं ॥

[५८]

दुख दुरन्त है प्रिय भारतका,
कब तक किसे सुनाऊँ मैं ?
जी कहता है उसके ऊपर
अभी आज बलि जाऊँ मैं ।
आप लोग यदि जायँ वहाँ पर
तो भी होगा काम नहीं,
किसी देशको परदेशीसे
मिल सकता आराम नहीं ॥

[५९]

अब विदेशियोंकी आशासे
है हताश भारत प्यारा,
हास विलास बन्द उसका है
है उदास भारत प्यारा ।

कर देते हैं भ्रष्ट प्रतिष्ठा
  वहाँ विदेशी जा करके,
पा करके उस स्वर्ण-भूमिको
  मक्खन रोटी खा करके॥

[६०]

इस कारण मैं स्वयं वहाँ पर
  जैसे होगा जाऊँगा,
झटपट उसको उद्धृत करके
  लौट यहीं फिर आऊँगा।
आशा है यह छुट्टी मेरी
  होगी अस्वीकार नहीं,
देवोंको भी रुच सकता है
  कैसे पर उपकार नहीं ?॥

[६१]

कुशल तभी है कहना मेरा
  आप लोग यदि मानेंगे,
जानेंगे क्या आप लोग भी
  जब हम भी हठ ठानेंगे।

सीधी उँगली रखनेसे घी
कभी निकल क्या सकता है ?
बिना आँचके पाये लोहा
कभी पिघल क्या सकता है ? ॥

[६२]

देवो ! मेरी बातोंका तुम
कान उठाकर ध्यान करो,
ज्ञानमान हो समझो बूझो
तन मनमें अभिमान करो ।
सभी सुरोंसे भारतवासी
असहयोग अब कर देंगे,
मदोन्मत्त खल-मण्डल-बलके
मुखमें मिट्टी भर देंगे ॥

[६३]

हम समूल देवत्व तुम्हारा
देवो ! धूल मिला देंगे,
त्रिभुवन भरके सकल सुराऽसुर-
के हम हृदय हिला देंगे ।

भूल गये थे, देश वेषका
 अब तक हमको बोध न था,
होता था अवरोध हमारा
 जब तक हमको क्रोध न था॥

[६४]

भारतसे विरुद्ध रह कर क्या
 इन्द्रासन रह सकता है ?
गुरु गंभीर गर्जना उसकी
 क्या कोई सह सकता है ?।
देवो ! दोष न अब मेरा है
 जो चाहें सो आप करें,
रहना है यदि मिलकर हमसे
 तो कहना चुपचाप करें॥

[६५]

यदि परस्व हरनेको दुर्जन
 प्रण कर रणमें मरते हैं,
तो निजस्व रक्षण करनेमें
 भारतीय कब डरते हैं ?।

पर हमसे अन्याय न होगा
चाहे सर्वस जाय चला,
चला न कागजका बेड़ा है
रहा भलेका अन्त भला ॥

[८६]

कहा इन्द्रने सभी सुरोंसे
पहले मैं सम्मति लूँगा,
भारतीय ! कल तक मैं तेरी
बातोंका उत्तर दूँगा ।
सफल मनोरथ हो जावेगा
धैर्य्य धरो अपने मनमें,
दुर्जन उससे कभी न डरते
तेज नहीं जिसके तनमें ॥

दूसरी बैठक।



[१]

दूजे दिन फिर उसी स्थान पर
उसी समयमें अमर सभी—
जुट कर बैठे, न्याय-समरके
लिए कसे थे कमर सभी।
विष्णु सभापति गये बनाये
फिर मंत्री सुरराज हुआ,
कहां आज तक कभी संगठित
वैसा नहीं समाज हुआ॥

[२]

तुरत सभापतिकी सम्मतिसे
सुरनायक तब खड़ा हुआ,
मनो व्यथित सा स्थगित देव-गण
रहा सोचमें पड़ा हुआ।
मंत्र-रुद्ध ज्यों क्रुद्ध फणी हो
बोला त्यों सुरराज वहाँ,
चिन्ता-ज्वलन ज्वलित चित स्थित है
कहिए किसके हाथ कहाँ?॥

[३]

पूर्व दिवस जो भारतीयने
मुझसे किया निवेदन है,
उसको श्रवण मनन करके हा
मेरा बड़ा दुखित मन है।
मुझसे कम क्या आप लोग भी
मनमें दुखी हुए होंगे ?
दीनोंके दुख देख कहीं क्या
सज्जन सुखी हुए होंगे ?॥

[४]

जो भारत भूतलके सिरका
मुकुट-रत्न था, आज वही—
पराधीन पद-दलित हुआ है
हमको लगती लाज नहीं।
झटपट सुरो ! समझकर कहिए
क्या कर्तव्य हमारा है ?
सदा दुलारा सदा सहारा
हिन्द हमारा प्यारा है ॥

[५]

स्वर्गलोकका भूतल भरसे
यद्यपि है सम्बन्ध सही,
किन्तु बिना भारतके उसका
रह सकता अस्तित्व नहीं ।
आना जाना लेना देना
उससे सदा हमारा है,
दोनों बने रहें दोनोंका
मित्रो ! तभी गुजारा है ॥

[६]

भरत-भूमिसी अन्य कहीं भी
होगी मही पुनीत नहीं,
गौरव भरे भारतीयोंसे
दूजे मनुज विनीत नहीं ।
सीधे सादे सत्यसंध वे
धर्मपरायण होते हैं,
उभय लोकका भार हमारे
ऊपर रखकर सोते हैं ॥

[७]

था विश्वास हमारा उनको
पर वे आज हताश हुए,
हास विलास छुटे उनके सब
मनों खलोंके ग्रास हुए।
श्रद्धा-बद्ध रहें फिर कैसे
जब हम काम न आते हैं,
दुखी रहें वे क्यों हम जिनसे
प्रतिदिन पूजा पाते हैं ?॥

[८]

कौन अकारण हमें बुला कर
पग धोकर सत्कार करे,
खिला पिलाकर हमें व्यर्थ क्यों
आप बिना आहार मरे ?।
हैं निलज्ज हम हैं कृतघ्न हम
हमें डूब मरना चहिए,
डरना चहिए या न किसीसे
भारत-दुख हरना चहिए॥

[९]

जिसका खावें उसका गावें
उसके लिए निछावर हों,
हानि लाभ वा यश अपयश हो
मिटकर रेणु-बराबर हों।
यही धर्मकी नीति उचित है
और कर्मकी रीति यही,
मीत हेतु निर्भीत रहे तो
पूरी प्रीति-प्रतीति यही॥

[१०]

तूल-तुल्य है तुच्छ वही जो
कृतज्ञतासे दूर रहे,
शूर रहे बातोंका केवल
और हृदयका क्रूर रहे।
जो उपकार किया भारतने
मित्रो! जो सत्कार किया,
है धिक्कार हमें, यदि उसका
नहीं अभी उद्धार किया॥

[११]

चार मास लक्ष्मीको लेकर
  नर नारायण सोते हैं,
रोते हैं सब भारतवासी
  दुखित विविध विधि होते हैं।
जहाँ सभापतिकी गति ऐसी
  वहाँ हमारी बात वृथा,
जहाँ तमोमय दिवस रहे तो
  वहाँ बिचारी रात वृथा॥

[१२]

जिस भारतमें कुअँर कन्हैया
  बन करके जगदीश रहे,
उनके रहते ही वह भारत
  आज राज-कृत क्लेश सहे ?
जब सुमेर ही घुना हुआ है
  व्यर्थ न क्यों तब माला हो ?
कज्जल-जल यदि बादल बरसे
  क्यों न महीतल काला हो ?॥

[१३]

स्वामी जैसा जहाँ रहेगा
अनुचर भी वैसे होंगे,
यदि सभीत मृगराज रहे तो
मृग अभीत कैसे होंगे ?।
जैसा विष्णु करेंगे वैसा
हम भी करनेवाले हैं,
उनकी हाँमें ही हाँ हम भी
हर दम भरनेवाले हैं ॥

[१४]

कहा बृहस्पतिने तब चिढ़ कर
इन्द्र ! नहीं ऐसा कहिए,
रहिए मौन, बैठिए, अथवा
कहे नीति जैसा, कहिए ।
भूप कूपमें गिरे भले ही
क्यों गिरते अनुचर सारे,
ग्रसे चन्द्रको राहु भले ही
ग्रसे न जाते हैं तारे ॥

[१५]

यदि लक्ष्मीश्वर रहें प्रमादी
तो अचरजकी बात नहीं,
जिसका हो उत्थान कभी क्यों
उसका हो विनिपात नहीं ? ।
क्या मद-हीन आप हैं कहिए
इन्द्रासनको पा करके ?
फिर उनकी तो बात निराली
जो हैं नाथ चराचरके ॥

[१६]

स्वर्गाधिप होकर तुम कैसे
दीनोंके दुख जानोगे ?
दुखियोंको भी सदा सुखी तुम
अपने सुखसे मानोगे ।
हिम-गिरि-वासी भीष्म-तापका
क्या अनुभव कर सकता है ?
क्या दीनोंके लिए विलासी
दुख सहकर मर सकता है ? ॥

[१७]

दीनानाथ दीनप्रतिपालक
दीनबन्धु अब कौन रहा ?
कौन कष्ट है जिसे मौन हो
हा भारतने नहीं सहा ? ।
पर कोई क्या कुछ भी उसके
काम अभी तक आया है ?
किन्तु उसीका अभी सभीने
जो पाया सो खाया है ॥

[१८]

हम हैं दीन दीन भारतके
लिए मीन हो जावेंगे,
सो जावेंगे हवन-कुण्डमें
भारतके, खो जावेंगे।
उपकारीके प्रतीकारमें
जिसने प्रत्युपकार किया,
उसका जन्म सफल है
जिसने सज्जनका सत्कार किया ॥

[१९]

बातें व्यर्थ बनाते जाओ
इन्द्र ! न मनमें लाज करो,
साथ सचीके अमरपुरीमें
रतिपतिके सम राज करो।
पर मैं अभी यहाँसे उठ कर
भारतहीको जाता हूँ,
दिखलाता हूँ शक्ति खलोंको
उन्हें समर सिखलाता हूँ॥

[२०]

देवगुरो ! ऐसा मत करिए
डरा नहीं मैं मरा नहीं,
जरा जरा भी मुझे न व्यापी
क्या मुझमें बल भरा नहीं ?।
वृत्रासुरका उर उद्भेदक
बना हुआ है वज्र अभी,
सुरनायक हूँ असुर-समरसे
मैं मुर सकता नहीं कभी॥

[२१]

मृदुल अंग मम समय पड़े पर
वज्र-तुल्य हो जाता है,
पाता है सुख शस्त्र-पात हो
भय इसका खो जाता है।
कर्मवीर हूँ मुझे न कोई
कर्म कठिन है सच मानो,
धैर्य धारिए दीनदयालो
भारतको उद्धृत जानो॥

[२२]

स्वर्गलोकके सिंहासनको
छोड़ूँगा मैं आज अभी,
काज करूँगा प्रिय भारतका
रख कर अपनी लाज अभी।
जिसको चलना होवे वह भी
सत्वर मेरे साथ चले,
साथ दुर्जनोंके संगरमें
चलकर दो दो हाथ चले॥

[२३]

कहा सभी देवोंने उठ कर
आप कीजिए राज यहाँ,
देवराज ! क्या चल सकता है
बिना आपके काज यहाँ ? ।
हम सब हिल मिलकर जा करके
भारतका उद्धार करें,
दुराचार-संचार हरें हम
असुर-संघ-संहार करें ॥

[२४]

अथवा बीस भारतीयोंको
भेज दीजिए आप वहाँ,
जाकर अपने प्रिय भारतका
हरें दास्य-संताप वहाँ ।
शीघ्र उसे स्वाधीन सुखी कर
फिर आजावें हानि नहीं,
जाकर फिर आनेमें उनको
या हमको है ग्लानि नहीं ॥

[२५]

कहा इन्द्रने बात सही है
वही सभापति जिसे कहें,
हैं अधीन हम सुरो ! उन्हींके
अपने मन क्या किसे कहें ?
बहुत विनयके सहित सुरेश्वर
इतना कहकर मौन हुआ,
सच है प्रभुके रहते प्रभुता
करनेमें क्षम कौन हुआ ? ॥

[२६]

कहा विष्णुने सुरगुरुसे
सुरपतिसे सुरगणसे हँसके,
सुख देकर सुख लूटा मैंने
देखो ! भारतमें बसके ।
मच्छ कच्छ वाराह बना मैं
जिसके कारण आज वहीं-
कैसे विस्मृत मुझसे होगा
क्या मुझमें है लाज नहीं ? ॥

[२७]

भारतीय सब रहें यहीं पर
आप लोग भी रहें यहीं,
भाग्य-भोग्य-उपभोग करें सब
घबड़ाते हैं विज्ञ नहीं।
आप लोग जो किया चाहते
मैं करता हूँ उसे स्वयम्,
मुझपर जो निर्भर रहता है
मैं भरता हूँ उसे स्वयम्॥

[२८]

जब जब दुखी हुआ है भारत
तब तब मैंने संग दिया,
किसी रंगसे किसी ढंगसे
उसके भयको भंग किया।
पर कुछ कारण था ऐसा ही
जिससे वह दुख पाता था,
चुप हो मैं सुनता जाता था
वह नित रोता गाता था॥

[२९]

सुखपर दुख मिलता है सुख भी-
दुख मिलने पर मिलता है,
दीपकसे कज्जल मिलता है
कमल कीचसे खिलता है।
जैसा भारत सुखी हुआ था
हुआ दुखी भी वैसा ही,
फिर भी शीघ्र सुखी होवेगा
प्रकृति-नियम है ऐसा ही॥

[३०]

क्यों सूर्योदय हो सकता है
यदि होवे सूर्यास्त नहीं,
कभी एककी विजय न होगी
यदि हो अन्य परास्त नहीं।
दिवस दीर्घ क्यों हो निदाघका
यदि हो छोटी रात नहीं,
उन्नति अवनतिकी भी गति है
यही दूसरी बात नहीं॥

[३१]

भारतीय जब परम सुखी थे
पश्चिमीय तब वन्य रहे,
सभ्य-शिरोमण भारतीय थे
जगमें अन्य जघन्य रहे।
पर जब पलटी प्रकृति तभीसे
उलटे होने काम लगे,
सुजन हुए बेकाम दुष्टजन
करने अब आराम लगे॥

[३२]

भूका भव्य भाल भारत ही
लीला-धाम हमारा है,
भूरि भक्तिके भाव भरा वह
लेता नाम हमारा है।
मैं क्यों भूलूँ उसे कभी भी
मैं भूला हूँ जिसे नहीं,
प्रेम-प्रणत पर नेम-निरत पर
ममता होगी किसे नहीं ?॥

[३३]

भेज दिये हैं चार पारिषद
भारत उद्धृत करनेको,
हरनेको मद दर्पित-दलका
जन्मभूमि पर मरनेको।
कहिए तो दस बीस पारिषद
और भेज दूँ आज अभी,
मिले स्वराज्य शीघ्र भारतको
गई नहीं है लाज अभी॥

[३४]

मैं भी जाता चला किन्तु वह
समय खड़ा है दूर अभी,
क्यों कि दण्डके मिले बिना क्या
नम्र पड़ा है क्रूर कभी ?।
जैसा कहिए पड़ा हुआ हूँ
देवो ! मैं असमंजसमें,
जगदीश्वर हूँ तौ भी रहता
मैं निज भक्तोंके वशमें॥

[३५]

देवोंने तब कहा वहाँ पर
अभी आप क्यों जावेंगे ?
जब तक हम हैं बने आप
क्यों प्रभुवर कष्ट उठावेंगे ?।
पारिषदोंकी उक्ति युक्तिसे
उदासीन खलगण होगा,
सुखासीन स्वाधीन सहजमें
भारत भी तत्क्षण होगा ॥

[३६]

भारतीय तब बड़े वेगसे
कड़े कण्ठसे बोल उठा,
नयमय उसकी विनय श्रवण कर
सबका आसन डोल उठा।
सच है सच कहनेमें भयका
होता है संचार नहीं,
बँच कर रच कर बचन कहे तो
होता बेड़ा पार नहीं ॥

[३७]

भगवन्! सुनकर बुरा न गुनना
जब घट घटके वासी हो,
खासी दासी रमा मिली है
सभी भाँति सुखरासी हो।
उज्ज्वल तनके कज्जल मनसे
यदि पड़ जाता काम कहीं,
लीला-धाम भूल तब जाते
लेते भारत-नाम नहीं॥

[३८]

सत्य-शक्ति या भव्य-भक्ति हा
भारतसी किसमें होगी,
सहे अनयको नयसे ऐसी
क्षमा कसी किसमें होगी ?।
लँगड़ा लूँला अंधा गूँगा
बनकर भारत रहता है,
बहता रहता दृग-जल उसका
सदा दास्य-दुख सहता है॥

[३९]

मैं भी भारतके मुखियोंका
अगुआ था सिर-तिलक रहा,
अहा कहाँ तक उसे कहूँगा
जो दुख मैंने वहाँ सहा।
निरपराध ही भेज दिया था
मुझे जलधिके पार प्रभो-
नौकरशाहीने, हो मुझको
जिसमें दुःख अपार प्रभो॥

[४०]

हे भगवन्! मैं कारागृहमें
इस विधि रक्खा जाता था,
कभी न मैं भारतका गृहका
समाचार तक पाता था।
अच्छी बातोंके कहनेपर
मुझको कारागार मिला,
पुरस्कारके स्थान दण्ड ही
मुझको बारम्बार मिला॥

[४१]

पर भारतकी सेवासे मैं
हटा स्वप्नमें भी न कभी,
यद्पि जन्म भर दिवस हमारे
कटे कष्टमें प्रभो ! सभी।
निश्चय उसी कष्टके बदले
स्वर्गलोकमें मैं आया,
मानो सेवाका फल मेवा
युगल करों मैंने पाया॥

[४२]

कहा विष्णुने वत्स ! विना दुख
सहे, कहाँ सुख मिलता है ?
बिना बीजके सड़े गले क्या
कभी कमल-दल खिलता है ?।
मैं भी भारत-जननीके गर्भा-
शयमें बहुबार रहा,
वहाँ न कारागृहके सम क्या
मैंने दुःख अपार सहा ?॥

[४३]

कष्ट सहन कर नष्ट भ्रष्ट नर
हो सकता है कभी नहीं,
तप्त किये पर कनक कान्तिको
खो सकता है कभी नहीं।
तपन-तापसे निरपराध ही
वत्स ! मही यदि जले नहीं,
जलधरसे जलधारा पाकर
तो वह फूले फले नहीं॥

[४४]

निपट निपात निकट है जिसका
वह उत्पात मचाता है,
जगमें मचल मचलकर चलता
नचता और नचाता है।
बुझने पर जब दीपक होते
भभक भभक कर जलते हैं,
जाने पर जब दुर्जन होते
उलटी चालें चलते हैं॥

[४५]

धैर्य धरो बेटा ! बतलाओ
अब क्या क्या करना होगा ?
चाहे कुछ भी हो, भारतका
अब तो दुख हरना होगा ।
जैसी तेरी सम्मति होगी
होगा तुरत प्रबन्ध वही,
अब भारतमें नहीं रहेगा
प्रतिबन्धकका गन्ध कहीं ॥

[४६]

भारतीयने कहा विनयसे
नयसे रसमय समयविचार,
निराधार हो डूब रहा है
भारत चिन्ता-धार मझार ।
उदासीन यदि आप रहेंगे
होगा वह स्वाधीन नहीं,
दीनबन्धु है कौन आपसा
या भारतसा दीन कहीं ? ॥

[४७]

जो न विदेशी भाषा-भूषा–
  के वश होकर फँसा रहे,
वही कहे जो सही करे जो
  नहीं करे सो नहीं कहे।
प्राण-प्रणोंसे प्रण प्रतिपाले
  भालेसे भी टले नहीं,
भारतका हित वही करेगा
  छल-चालोंसे चले नहीं॥

[४८]

खाते पीते सोते जगते
  जो जन सदा सचेत रहे,
सुमन सरीखे तन पर जिसके
  सुखद खलोंकी बेंत रहे।
जो विभ्रमके भ्रममें पड़ कर
  श्रमके क्रमसे थके नहीं,
भारतका हित वही करेगा
  काम करे जो बके नहीं॥

[४९]

समझे खेल जेलको मनमें
जो बेड़ी पहिने तनमें,
खल-बादलकी वृष्टि सहे जो
फाँके धूल विजन वनमें।
मरण-कालको उत्सव समझे
जो न किसीसे हटे कभी,
भारतका हित वही करेगा
जो न बातसे कटे कभी॥

[५०]

जो भारतमें बसे, वस्तु
भारतकी वर्ते प्रण करके,
दुख सुख सम समझे, न पड़े जो
कभी प्रलोभनमें परके।
करे साधुसे सदा साधुता
खलसे खलता किया करे,
भारतका हित वही करे जो
असहयोग-रस पिया करे॥

[५१]

जो न विदेशी वस्तु विलोके
ओढ़े चद्दर खद्दरकी,
जो केवल अपने बल चल कर
देख भाल रक्खे घरकी।
खल-दलके कलसे छलसे जो
प्रबल पराक्रम दिखलावे,
भारतका हित वही करेगा
जो न कभी धोखा खावे॥

[५२]

श्वेत चर्म पर जो न भूल कर
व्यर्थ त्रिशंकु-तुल्य झूले,
दास-वृत्ति पाकरके मनमें
जो न फूल करके ऊले।
जो पर-वेश क्लेशाकर समझे
देश-निदेश शीस धारे,
भारतका हित वही करेगा
अहितोंसे न कभी हारे॥

[५३]

फैशनकी फाँसीमें फँस कर
जो नर नहीं विलास करे,
भुक्ति मुक्तिके लिए भक्तिसे
जो नर शक्ति-विकाश करे।
जो न सुखाशासे निराश हो
कर अपना उपहास करे,
भारतका हित वही करेगा
जो न त्रासको पास करे॥

[५४]

पिस जावे जो तिलसा सुखसे
घिस जावे जो चन्दनसा,
हेलेना टापूको मनमें
जो समझे नन्दन वनसा।
मरे भले ही मुरे न परसे
प्रलय-बीच भी अचल रहे,
भारतका हित वही करेगा
जो सबलों पर प्रबल रहे॥

[५५]

मद-मत्तोंको भुनगोंके सम
समझे जो गम करे नहीं,
क्रमसे त्रिक्रम द्विगुण दिखावे
सत्साहस कम करे नहीं।
जो परवाह न परकी रक्खे
अपनेको अपना जाने,
भारतका हित वही करेगा
जो सुखको सपना जाने॥

[५६]

जो सर्वस्व निछावर कर दे
स्वयं देश-दुख हरनेको,
विमुखोंके मुख-मर्दन कर दे
गर्दन दे जो मरनेको।
धर्म कर्मके मर्म-तत्त्वको
स्वत्व-सहित जो प्राप्त करे,
भारतका हित वही करेगा
सत्व शठों पर व्याप्त करे॥

[५७]

जाति धर्मके, रंग रूपके
भेदभाव जो दूर करे,
मेल मिलाप करे, अनमिल हो
जो मनमें न गरूर करे।
जो क्रूरोंको हाँ हुजूरका
कहना तजकर तुष्ट रहे,
भारतका हित वही करेगा
जो दुष्टोंपर पुष्ट रहे॥

[५८]

यों रह कर यदि प्रभो पारिषद
करें आपके कार्य वहाँ,
लख औदार्य आर्य-व्रज विहँसे
हो स्वराज्य अनिवार्य वहाँ।
यदि ऐसा वे कर न सकें तो
व्यर्थ हुआ उनका जाना,
माना जाता वचन न उसका
जो चलता है मनमाना॥

[५९]

इसी लिए यदि मुझे भेजते
तो भारत-हित हो जाता,
खो जाता तो नाथ ! अहित-दल
भारत कभी न रो पाता।
पड़ा अधूरा है मैंने जिस
उद्यमका आरम्भ किया,
फल पा जाते शीघ्र जिन्होंने
था भारतसे दम्भ किया॥

[६०]

चक्रपाणि ! अथवा भारतमें
चले जाइए आप अभी,
ताप अभी हट जावें उसके
कट जावें सब पाप अभी।
चक्र सुदर्शनके दर्शनको
जब तक दुष्ट न पावेंगे,
तब तक हाथ न आवेंगे,
भारतमें भय उपजावेंगे॥

[६१]

कहा इन्द्रने भारतका मैं
भ्रमण करूँगा नर-तनसे,
दुर्जन-वनको छिन्न भिन्न कर
आ जाऊँगा निज मनसे।
हो जाता इंद्रत्व सफल यदि
मैं भारत जाने पाता,
जाकर वहाँ जेलखानेकी
यदि रोटी खाने पाता॥

[६२]

भूरिभाग्य भारत रजसे यदि
भूषित भाल हमारा हो,
तो करमें करवाल काल-सम
सज्जित हाल हमारा हो।
भारतका दुख दूर करूँगा
हाथ उठाकर कहता हूँ,
दुखिया भारतके दुख सुनकर
हरे! दुसह दुख सहता हूँ॥

[६३]

सुरपति ! सुरपुरमें सुर-गणके
साथ करो आराम यहीं,
खल-दल प्रबल पड़ा है तो भी
वहाँ तुम्हारा काम नहीं।
भारतको स्वतन्त्र होने दो
पारिषदोंके हाथ अभी,
धैर्य धरो फिर भारत-दर्शन
करना मेरे साथ कभी॥

[६४]

भारतीयसे भी हरि बोले
भैया ! अब निश्चिन्त रहो,
कहो किसीसे भी न कभी कुछ
इने गिने दिन दुःख सहो।
पराधीनतासे छूटेगा
भारत अब है देर नहीं,
कोई भी हो, सदा मही पर
कर सकता अन्धेर नहीं॥

[६५]

जैसा तुमने किया, पारिषद
काम करेंगे वैसा ही,
कैसी ही नौकरशाही हो
मद न रहेगा ऐसा ही।
भारतीय! सिद्धान्त तुम्हारा
मैं उनको समझा दूँगा,
सत्य मानना, अब भारतके
उरकी आग बुझा दूँगा॥

[६६]

हरिके शान्त वचनको सुनकर
भारतीयको शान्ति मिली,
भ्रान्ति मिटी सबकी, सबके
वदनोंपर अद्भुत कान्ति खिली।
सभा सभापतिकी आज्ञासे
हुई विसर्जित अति सुखसे,
"विजयी भारतकी जय हो" यों
कहते उठे सभी मुखसे॥

समाप्त।

आशा ।



[१]

जब जब भारत-भूने
   असुरोंसे दुख पाया,
तब तब हो अवतरित
   ईशने प्रेम दिखाया ।
दुष्ट दमन कर दिया
   चक्रधरने पलभरमें,
सुजन-संघ रख लिया
   सुदर्शन लेकर करमें ॥

[२]

देख दुखी इस घड़ी
भव्य भारतको भारी,
हुए द्रवित द्रुत धन्य !
हृदयमें सदय मुरारी।
जिसने विविध विहार
जहाँ पर कभी किये हों,
प्रति पल तन मन क्यों न
उसीके लिए दिये हों॥

[३]

लखकर भारी भार
भारत-भूके सिर ऊपर,
पारिषदोंसे कहा
चले आओ तुम भूपर।
बलके विविध विवेक-
विधानोंको बतलाना,
उसे धर्मके कर्म
मर्मको भी जतलाना॥

[४]

पारिषदोंने कहा नाथ !
　　उपदेश सही है,
विस्तृत कहिए उसे सुनें
　　संतोष नहीं है ।
चक्रपाणिने कहा
　　कहाँ तक तुम्हें पढ़ावें,
पुनः सुनो संक्षिप्त कथा
　　क्यों व्यर्थ बढ़ावें ॥

[५]

भूपर कंजे नेत्र
　　दिखाई देवें जिनके,
कभी स्वप्नमें भी न
　　वचन पूरे हों जिनके ।
उन्हें कपट-आगार
　　समझकर डपटे रहना,
जब तक पूरा हो न
　　कार्यमें लपटे रहना ॥

[६]

ज्यों खाकरके काक
 दाखको दुख पाता है,
ज्यों भरनीको घोंट
 उरग उर फट जाता है।
स्वयं सिंहिका मरी पवन
 सुतको खाकर ज्यों,
करो जेलका नाश
 जेल भीतर जाकर त्यों॥

[७]

झख बन मैंने जलधि पैठ
 ज्यों वेद उबारा,
मैंने ही मुख पैठ
 बकासुरको ज्यों मारा।
त्यों ही तुम सब स्वयं
 शीघ्र जेलोंमें जाना,
प्रिय भारतका बन्ध छुड़ा
 करके सुख पाना॥

[८]

भारत परवश हुआ
  प्रमादी होकर अपने,
अब उद्यमके बिना
  स्ववश क्यों होगा सपने।
ठग व्यापारी लूट रहे
  भारतमें जाकर,
पारिषदो ! तुम शीघ्र
  बचा दो उसे जगाकर ॥

[९]

सभी भाँति बलहीन
  और धनहीन हुआ है,
पराधीन प्राचीन
  मनों मरु-मीन हुआ है।
रोग शोक-संतप्त
  बड़े दुख झेल रहा है,
निरपराध ही खेल
  जेलका खेल रहा है ॥

[१०]

पारिषदो ! अविलम्ब
   पहुँच कर उसे उबारो,
वारो तन मन सभी
   हिन्द पर धर्म विचारो।
चारों ही फल तुम्हें
   मिलेंगे हाथ हमारे,
मारे भारत-विघ्न गये
   यदि हाथ तुम्हारे॥

[११]

कशिपु-तनयने किया रहा
   सत्याग्रहको जब,
भारतमें मैं प्रकट हुआ
   नरहरि बनकर तब।
भारत भर प्रह्लाद आज
   बन गया हमारा,
दूँगा उसको नहीं
   भला क्यों शीघ्र सहारा॥

[१२]

अपमानित जब हुआ
  विभीषण लंकेश्वरसे,
आया तब मम चरण-
  शरणमें चलकर घरसे ।
सादर मैंने उसे
  सखा-सम हृदय लगाया,
रणमें रावण मार
  उसे लंकेश बनाया ॥

[१३]

अपमानित ध्रुव हुआ
  अकारण मात-पितासे,
स्मरण किया तब मुझे
  प्रेमरत मनस्वितासे ।
पाया उसने अचल और
  उत्तम थल ऊँचा,
शरणागत फिर हो हताश
  क्यों हिन्द समूचा ॥

[१४]

शिविसे पढ़िये पाठ
  पराये हित मरनेका,
दे करके निज मांस
  क्षुधाके दुख हरनेका।
पारिषदो ! माहात्म्य
  अगम है उपकारीका,
असि-धारा व्रत बड़ा
  विषम है उपकारीका॥

[१५]

सत्याग्रहका शस्त्र
  स्वत्व रक्षित रखता है,
सत्य सत्वका शत्रु
  पापका फल चखता है।
कर्ममूल है धर्म
  सत्य ही धर्ममूल है,
सत्य-शक्तिके तुल्य
  न हो सकता त्रिशूल है।

[१६]

किन्तु सत्यका मार्ग
  विमुख सा दुख देता है,
ग्राम धाम परिवार
  प्रमुख सुख हर लेता है।
भारतीय हरिचन्द्रकथा
  पहले पढ़ लेना,
सत्याग्रह-ग्रह विकट
  निकट पीछे पग देना॥

[१७]

अजय सत्यकी विजय
  सदा होती आई है,
निस्सहायका सत्य-
  सहाई है भाई है।
पारिषदो! तुम सत्य
  शस्त्रको छोड़ न देना,
सत्य-समरसे कभी
  भूल मुख मोड़ न लेना॥

[१८]

मुरना मत जो कहूँ
उसे निर्भय हो करना,
भूपर जाकर स्वयं
हिन्दके ऊपर मरना।
दिखलाना सन्मार्ग
किसीको नहीं दुखाना,
दुःख उठाना स्वयं
आँख तक नहीं उठाना॥

[१९]

धन धरतीसे हीन दीन
हो गया यदपि है,
चेता उसने नहीं
चेतना हीन तदपि है।
खो करके सर्वस्व मूढ़
ठोकर खाता है,
निज नौकरकी शरण
आर्य होकर जाता है॥

[२०]

यदि दुष्टोंके निकट
  आत्मके दुख रोना है,
सुख मिलता क्या उसे
  और दण्डित होना है ।
पारिषदो ! अविलम्ब बनो
  अवलम्बन उसका,
भर दो भारत-पेट सुखित
  कर दो मन उसका ॥

[२१]

प्यारा भारत यदपि
  कण्ठगत-प्राण हुआ है,
अप्रमाणकी विपणि पड़ा
  निस्त्राण हुआ है ।
उसका स्वार्थ-निमग्न
  जनोंसे साथ पड़ा है,
तदपि व्यर्थसा चक्र
  हमारे हाथ पड़ा है ॥

[२२]

सुधा मुधा है भरत-
   भूमिकी रजके आगे,
इस रहस्यका तत्त्व
   जान सकते न अभागे।
पारिषदो ! जब कभी वहाँ
   तुम सब जाओगे,
होवेगा देवत्व सफल
   अति सुख पाओगे॥

[२३]

लंकेश्वरका अनुज
   बिभीषण राक्षस ही था,
हिन्द-हितैषी बना, किन्तु
   वह सत्य सही था।
भारत उसका नाम
   नित्य जपता रहता है,
महाभागवत उसे
   धर्म-सागर कहता है॥

[२४]

तुम लोगोंको बीस
ईशसे भी मानेगा,
अपना हितकर पारिषदो !
वह जब जानेगा।
कभी स्वप्नमें भी न
तुम्हें भूलेगा मनमें,
जब तक उसके प्राण
रहेंगे उसके तनमें॥

[२५]

विविध रूपमें यदपि
विविध हो करके रहना,
किन्तु एक ही बात
एक स्वर होकर कहना।
करके युक्ति अटूट
हिन्दकी फूट मिटाना,
प्राण-प्रणके सहित
हिन्दकी लूट मिटाना॥

[२६]

मिलकर तत्त्व पचीस
  सृष्टि करते हैं जैसे,
मिल करके धूमादि
  वृष्टि करते हैं जैसे।
वैसे ही तुम लोग
  समयपर हिल मिल जाना,
शीघ्र असम्भवको भी
  सम्भव कर दिखलाना॥

[२७]

समयोचित सब कार्य
  समझकर करना होगा,
डरना यमसे भी न,
  समरमें मरन होगा।
पारिषद्दो! अब शीघ्र उठो
  मत देर लगाओ,
भारतका उद्धार करो
  भारत यश गाओ॥

[२८]

सुन स्वामीकी बात
  पारिषद् चले वहाँसे,
करते भारत-स्तवन
  बड़े ही भले वहाँसे।
मानो बन्धन-मुक्त केसरी
  तरज रहे हों,
धीर-ध्वनिसे जलद्
  मनोहर गरज रहे हों॥

गान ।

भारत त्रिलोकका है, सिरताज हमारा ।
सर्वस्व है हमारा, गुरुराज हमारा ।
उसके लिए मरेंगे, मनमें नहीं डरेंगे ।
पुज जायगा मनोरथ, सब आज हमारा ।
अब दुर्जनोंका दावा, उसपर नहीं रहेगा ।
वह देश है हमारा, वह राज हमारा ॥
नर-राक्षसोंसे रक्षा, मिलकर करेंगे उसकी ।
यह धर्म है हमारा, यह काज हमारा ॥
सब शत्रुओंसे अपना, सम्बन्ध तोड़ देंगे ।
यह शस्त्र है हमारा, यह साज हमारा ॥

